http://krishipravahika.vitalbiotech.org/

कृषि प्रवाहिका: ई-समाचार पत्रिका

e-ISSN: 2583 – 0430

कृषि-प्रवाहिका: ई-समाचार पत्रिका, (2024) वर्ष 4, अंक 10, 57-61

Article ID: 403

पशुओं में गर्भपात के संक्रामक कारण व प्रबंधन

डा0 विभा यादव [1'], डा0 आर0पी0 दिवाकर [2], जे0एन0 यादव[3], एवं विभू मौर्या[4]

[1] सह प्राध्यापक [2] सहायक प्राध्यापक [3]युवा विशेषज्ञ ग्रेड-2 [4]एमवीएसी स्कालर
पशु सूक्ष्म जीव विज्ञान विभाग, पशुचिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश।

गर्भित मादा पशु से भ्रूण का गर्भकाल का समय पूरा होने से पूर्व ही शरीर से बाहर फंेक देना गर्भपात कहलाता है। अर्थात् गर्भ में पल रहे बच्चे का पूर्ण विकास होने से पूर्व बाहर आ जाना या गर्भाशय से बाहर फेंक देना, इसी श्रेणी में आता है। यह बच्चा या तो मरा हुआ होता है या फिर वह 24 घण्टे के अन्दर मर जाता है। भ्रूण के दो-तीन माह की अवधि तक होने वाले गर्भपात का पशु पालकों को पता नही चल पाता और इसको तकनीकी रूप से प्रारम्भिक अवस्था में भ्रूण की मृत्यु हो जाना कहते है। अत्यन्त प्रारम्भिक अवस्था का भ्रूण मुख्यतः गर्भाशय में अवशोषित हो जाता है और बिना किसी लक्षण के गर्भ का समय खत्म हो जाता है। सामान्यतयाः गर्भावस्था के दो महीने तक होने पर भ्रूण के साथ-साथ थोडा बहुत आवल भी साथ बाहर दिखाई पडता है, जो स्पष्ट रूप से गर्भपात की श्रेणी में आता है, इसी प्रकार भ्रूण गर्भावस्था पूर्ण होने पर मृतक पैदा होता है, इस अवस्था को स्टील बोर्न बच्चा पैदा होना कहते है, यह स्थिति जन्म के समय होने वाली कठिनाई, गर्भ मे पल रहे बच्चे की मृत्यु हो जाने अथवा गर्भाशय में ही किसी बीमारी के कारण गर्भपात की स्थिति आती है। कुछ बीमारियों में जिन्दा बच्चे भी गर्भपात के कारण पैदा होते है, जो बहुत कमजोर होते है अथवा कन्जानाईटल विकृति (संरचनात्मक अथवा शरीर क्रिया में होने वाली विकृति, जो भ्रूण के विकास के समय आती है) के साथ पैदा होते है।

सामान्यतया पशुओं के समूह में गर्भपात की दर एक से दो प्रतिशत होती है। किसी पशु समूह में केवल एक गर्भपात हो जाने से अधिक परेशान होने की आवश्यकता नहीं होती है, फिर भी ऐसे मादा पशु को बाकी पशु से अलग कर देना चाहिए और उसे साफ करने के साथ ही गर्भपात के स्वरूप बाहर आये आवल व भ्रूण आदि को विसंक्रमित कर मिट्टी मे दबा देना चाहिए, परन्तु यदि गर्भपात की दर तीन से पांच प्रतिशत तक किसी डेरी फार्म पर हो जाये तो इसके लिए नजदीक के पशु चिकित्सक से सलाह ली जानी अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए टीकाकरण व पूर्व के प्रजनन के इतिहास की जानकारी करना आवश्यक होता है। पशु चिकित्सक ऐसी दशा में अच्छे निदान हेतु गर्भपात के पदार्थ को जांच हेतु प्रयोगशाला में भेज सकता है, यदि तत्काल कोई पशु चिकित्सक उपलब्ध नहीं है तो गर्भपात के स्वरूप बाहर आये भ्रूण व आवल के कुछ भाग को एक प्लास्टिक के थैले में रखकर उसे 38 से 45 डिग्री फारेनहाईट के तापमान पर रख देना चाहिए, इस प्रकार के पदार्थ को फार्म से हटाने के लिए अच्छे से धुलाई करनी चाहिए जिससे वह वहां जमने न पाये। सामान्यतया पशु पालक गर्भपात होने के लिए किसी प्रकार के चोट को जिम्मेदार ठहराते है, परन्तु यह समझना चाहिए कि सामान्य दशा में भ्रूण व पेट में पल रहा बच्चा, आवल व भ्रूण द्रव्य में इस तरह संरक्षित रहता है कि अत्यन्त गम्भीर चोट न हो तो गर्भपात नहीं हो सकता है। गर्भपात का कारण कई बार जहरीले पौधो के टाक्सिन भी होते है, परन्तु गर्भपात का सबसे सामान्य व प्रमुख कारण विभिन्न प्रकार के संक्रामक जीवाणु, विषाणु, कवक आदि द्वारा जनित रोगों का होना है।

गर्भपात करने वाली प्रमुख संक्रामक बीमारियां-

1.ब्लूटंगः- यह आर्बी वायरस, जिसके 24 विभिन्न सिरो टाईप होते है, जो पशुओं में चिचडे के द्वारा फैलता है। ऐतिहासिक रूप से पहली बार इसे यू0एस0ए0 में खोजा गया था, इस वायरस द्वारा सुखे तथा मरे हुए बच्चे के रूप से गर्भपात होता है, यदि बच्चा जिन्दा होता है, तो इस रोग के कारण उसके केन्द्रीय तंत्रिका में गड़बड़ी दिखाई देती है अथवा उसके विकास में उसका स्वरूप बिगडा हुआ होता है, इस वायरस के कारण बहुत बड़ी प्रजनन क्षति होती है, इस वायरस से संक्रमित पशुओं के झुण्ड में पैदा हुए बच्चे गर्भाशय के अन्दर ही संक्रमण प्राप्त कर लेते है।

निदान- इस वायरस की पहचान एन्टी बॉडीज द्वारा जो प्रथम दूध (खीस) में मिलती है, पी0सी0आर0 परीक्षण द्वारा की जाती है, इस हेतु मृत भ्रूण के मस्तिष्क, प्लीहा और सम्पूर्ण रक्त से सैंप्पल लिए जाते हैं।

नियंत्रण-

1. इस वायरस से बचाव हेतु टीकाकरण ही सर्वोत्तम उपाय है।
2. पशुओं का प्रबंधन इस रूप से होना चाहिए कि उनका सम्पर्क चिचड़ो से न होने पाये।

2.बोवाईन वायरल डायरियां:- पशुओं में गर्भपात करने का यह प्रमुख कारणो में से एक है, इसका वायरस भी गर्भपात हुए भ्रूण व उसके जननीय पदार्थो से प्राप्त सैम्पल में पाया जाता है। गर्भ में पल रहे भ्रूण में इस रोग से विभिन्न प्रकार की विकृतियां होती है, इस संक्रमण गर्भाधान के पूर्व से अथवा गर्भ के प्रारम्भिक 40 दिनों में होता है तथा इसके कारण पशुओं में बांझपन तथा भ्रूण मृत्यु की समस्या प्रायः देखने को मिलती है। गर्भावस्था के 40 से 125 दिनों के बीच संक्रमण होने पर यदि भ्रूण जिन्दा रह जाता है तो इससे संक्रमित बच्चा पैदा होता है, इसी प्रकार 100 से 150 दिनों के गर्भावस्था के समय जब विभिन्न प्रकार के अंग बनने शुरू हो जाते है तो केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र में विभिन्न प्रकार की विकृतियां (सेरीबेलर हाईपोप्लेसिया, हाईड्रोसिफेली, हाईड्रोसीफेलस, माईक्रोइनसेफेली तथा स्पाईनल कार्ड हाईपोप्लेसिया) हो जाती है, इसी प्रकार भ्रूण में पल रहे बच्चे में आंख से सम्बन्धित विकृतियां, जैसे कैटाररेक्ट, आप्टिक न्यूराईटिस, रैटिनल क्षरण तथा माईक्रोप्थैलिमिया आदि देखने को मिलती है। गर्भावस्था के 125 दिनों के बाद इस बीमारी से गर्भपात हो जाता है अथवा भ्रूण के प्रति रक्षा तंत्र से इस वायरस का असर खत्म हो जाता है।

निदान-इस वायरस की पहचान भी इम्यूनोलोजिक स्टेनिंग, पी0सी0आर0 परीक्षण द्वारा किया जाता है, यइ वायरस भी मरे हुए भ्रूण के विभिन्न प्रकार के उत्तक से परीक्षण हेतु भेजा जा सकता है, परन्तु प्लीहा ही सर्वोत्तम होता है, इस वायरस के संक्रमण से छोटे-छोटे झुण्ड में अलग-अलग स्थानों पर गर्भपात की समस्या देखने को मिलती है।

नियंत्रण-

1. इस वायरस से बचाव हेतु टीकाकरण किया जाना चाहिए।
2. सतत रूप से संक्रमित रहने वाले पशुओं को हटा देना चाहिए।

3. आई0बी0आर0:- विभिन्न प्रकार के विषाणु जनित गर्भपात के कारणो में से एक प्रमुख कारण इन्फैक्सीयस बोवाईन राईनोटे[a]काईटिस है, इसके कारण टीकाकरण न हुए पशुओं में गर्भपात की दर 05 से 60 प्रतिशत तक होती है, यह वायरस बहुत तेजी से फैलता है, क्योंकि इसकी उपस्थिति कई बार केवल कैरियर का काम करती है। वायरस का लोड अधिक होने के बाद ही गर्भपात होता है। इस रोग से गर्भावस्था को 04 माह से पूर्ण होने तक गर्भपात देखने को मिलता है। इसमें यकृत में नेक्रोटिक परिवर्तन दिखाई देते है, कई बार प्लेसेन्टा तथा भ्रूण में किसी प्रकार का बाहर से परिवर्तन दिखाई नही देता है। जबकि सूक्ष्मदर्शी से देखने पर प्लेसेन्टा में नेक्रोटिक परिवर्तन दिखाई देते है।

निदान- वृक्क, फैफडे, यकृत, प्लेसेन्टा तथा ऐडरीनल ग्रंथी से प्राप्त प्रदर्शि के इम्यूनोलाजिक स्टेनिंग द्वारा इस विषाणु की पहचान की जाती है।

नियंत्रण-

1. इस रोग से बचाव हेतु सामुहिक टीकाकरण उपयुक्त होता है।
2. संक्रमित पशुओं को अन्य पशुओं से अलग रखना चाहिए।

4. ब्रूसेलोसिसः- इस रोग को बैंग्स डिसीज भी कहते हैं, विभिन्न देशों में इसके नियंत्रण हेतु परीक्षण, स्लाटर तथा बछियों में टीकाकरण की नीति अपनाई जाती है, इस बीमारी से गर्भावस्था के लगभग 07 महीने पूर्ण होने पर गर्भपात होता है। यदि टीकाकरण न हुआ हो तो लगभग 80 प्रतिशत पशुओं में गर्भपात गर्भकाल के अन्तिम समय में भी देखने को मिलता है। इस रोग का जीवाणु म्यूकस झिल्ली के द्वारा पशु में प्रवेश करता है। गर्भपात संक्रमण के दो हफ्ते से पांच महीने के बाद होता है, इससे प्रभावित गर्भपात में आवल में नैक्रोटिक परिवर्तन देखने को मिलते है तथा रंग लाल से पीला दिखाई पड़ता है।

यह रोग पशुओं से मनुष्यों मे फैलने वाला रोग है, अतः इससे बचने के लिए हर सम्भव उपाय करना चाहिए व सीधे सम्पर्क में आने से बचना चाहिए।

निदान-सीरोलॉजिकल परीक्षण द्वारा प्रदर्श आवल अथवा भ्रूण के पेट या फेफड़े से लिया जाता है।

नियंत्रण-

1. इस रोग से बचाव हेतु टीकाकरण प्रारम्भिक अवस्था (बछियों) में किया जाना चाहिए।
2. सतत रूप से संक्रमित रहने वाले पशुओं को हटा देना चाहिए।

5. कैम्पाईलोबेक्टिरियोसिसः- इस रोग का कारण कम्पाईलोबैक्टर नामक जीवाणु, जो प्रजनन सम्बन्धी रोगों को जन्म देता है, इसके कारण पशुओ में सामन्यतया बांझपन अथवा गर्भकाल के प्रारम्भिक अवस्था में भ्रूण मृत्यु हो जाती है, परन्तु गर्भपात गर्भावस्था के चार से आठ महीने के बीच होता है। गर्भपात हुए बच्चे में कोई विशेष परिवर्तन बाहर से दिखाई नहीं देता है, परन्तु फेफड़े काफी फैले हुए व गम्भीर रूप से जीवाणु से प्रभावित होते है, इसमें फाईब्रिनस प्ल्यूराईटिस तथा पैरीटूनाईटिस के साथ-साथ ब्रांको-न्यूमोनिया देखने को मिलती है। आवल में भी संक्रमण दिखता है।

निदान- मृतक बच्चे के पेट से लिए गये प्रदर्श का डार्क फिल्ड परीक्षण अथवा प्लैसेंन्टा या पेट के पदार्थ का कल्चर से इस जीवाणु की पहचान की जाती है।

नियंत्रण-

1. इस रोग से बचाव हेतु टीकाकरण किया जाना चाहिए।
2. कृत्रिम गर्भाधान से इस रोग के संक्रमण को रोका जा सकता है।

6. क्लेमाईडियोसिसः- इस रोग का कारण क्लेमाईडिया ऐबोर्टस नामक जीवाणु है, इसमें गर्भपात गर्भावस्था के अन्तिम तिमाही के अन्त समय में होता है, परन्तु कभी-कभी पहले भी हो सकता है, इस रोग से ग्रसित गर्भपात के समय निकले आवल में अत्यधिक मोटाई तथा पीले भूरे रंग का गाढा स्राव चिपका हुआ दिखाई देता है। प्लेसेन्टाईसिस मुख्य रूप दिखती है। इससे साथ-साथ न्यूमोनिया तथा हैपेटाईटिस भी कुछ मामलो मे पाया जाता है।

यह जीवाणु भी मनुष्यों में पशुओ से फैलता है, कई बार गर्भधारण महिला में गर्भपात का कारण बन जाता है व कई अन्य जीवन भय की बीमारियों को जन्म देता है।

निदान-प्लेसेन्टा से प्राप्त पदार्थ के परीक्षण द्वारा इस जीवाणु की पहचान की जाती है अथवा ऐलिसा, फ्लूरोसेन्ट ऐन्टीबॉडी स्टेनिंग, पी0सी0आर0 अथवा सेल कल्चर द्वारा की जाती है। यह जीवाणु फैफड़े अथवा यकृत से सामान्यतया प्राप्त प्रदर्शो से दिखाई पड़ जाता है। जबकि प्लैसेन्टा से कई बार नहीं दिखाई पडता है।

नियंत्रण-

1. इस रोग से बचाव हेतु कोई टीका उपलब्ध नहीं है।
2. संक्रमित पशुओ को अन्य पशुओं से अलग रखना चाहिए।

7. लैप्टोस्पाईरोसिसः- यह रोग लैप्टोस्पाईरा नामक जीवाणु से होता है, जिसके 07 स्पीसीज तथा 200 से अधिक सीरोवार्स पहचाने गये हैं। यह जीवाणु भी गर्भावस्था के अन्तिम तिमाही में गर्भपात करता है। इसके कुछ सीरोवार्स किडनी तथा प्रजनन अंगो में पशु के जीवन पर्यन्त पाये जाते हैं। वाहक मादा अथवा नर पशु में

प्रजनन क्षमता की दर घट जाती है। गर्भपात की दर भी इसके संक्रमण से 05 से 40 प्रतिशत तक पायी जाती है। आवल का रंग हल्के भूरे से पीले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। गर्भ मे पल रहा भूरण गर्भपात से एक या दो दिन पहले ही मरा हुआ होता है। कई बार बछडे जिन्दा भी पैदा होते है, परन्तु काफी कमजोर होते है।

यह रोग भी पशुओ से मनुष्यों में फैलता है, इस रोग से संक्रमित मादा पशु के दूध अथवा पेशाब से तीन माह तक संक्रमण का खतरा रहता है। जबकि हर्डजो नामक सीरोवार जो कि उपचार न किये गये पशुओ से जीवन पर्यन्त फैलता है।

निदान- आवल तथा भूरण के कुछ भाग को प्रयोगशाला भेजा जाता है, जहां पर फ्लूरोसेन्ट एन्टीबाडीज स्टेनिंग अथवा पी0सी0आर0 परीक्षण द्वारा इस जीवाणु की पहचान की जाती है।

नियंत्रण-

1. इस रोग से बचाव हेतु मल्टीवैलेन्ट टीकों द्वारा टीकाकरण उपयुक्त होता है।
2. संक्रमण के श्रोतों जैसे चारा व पानी का कुत्ते, चुहो व अन्य जंगली जीवो द्वारा संक्रमित होने से बचाना चाहिए।
3. वाहक पशुओं में पशु चिकित्सक की सलाह से विभिन्न प्रकार के एन्टीबाईयोटिक दवाओं द्वारा उपचार कराया जाना उचित होता है।

8. लिस्टिरीयोसिसः- यह रोग लिस्टिरिया नामक जीवाणु से होता है, जो आवल मे संक्रमण के साथ ही भूरण में सैप्टिसिमियां करता है। गर्भपात अलग-अलग छोटे-छोटे स्थानों पर होती है, परन्तु एक पशु समूह के 10 से 20 प्रतिशत पशुआं को प्रभावित करता है। इसके संक्रमण से गर्भकाल के किसी भी अवस्था मंे गर्भपात हो सकता है और गर्भपात से पूर्व गर्भित पशु को बुखार तथा भूख न लगने की समस्या हो जाती है, साथ ही जेर रूकने की समस्या सामान्यतया देखने को मिलती है।

यह भी एक पशुओं से मनुष्यों में फैलने वाली गम्भीर प्रकृति की जूनोटिक बीमारी है, जो सम्भवतया सही तरीके से दूध के पाश्चूराईजेशन न होने अथवा कम पके हुए दूध के सेवन से होती है।

निदान- इस जीवाणु का कल्चर परीक्षण भूरण अथवा आवल से प्राप्त प्रदर्श द्वारा किया जाता है।

नियंत्रण-

1. इस रोग से बचाव हेतु दूध को अच्छी तरह उबाल कर सेवन करना चाहिए।
2. वाहक पशुओं में पशु चिकित्सक की सलाह से विभिन्न प्रकार के एन्टीबाईयोटिक दवाओं द्वारा उपचार कराया जाना उचित होता है।

9. ट्राईकोमोनिएसिसः- यह रोग ट्राईट्रीकोमोनास फीटस के संक्रमण द्वारा होने वाला प्रजनन सम्बन्धी रोग है, जिससे पशुओ में प्रमुखतया बाँझपन व कभी-कभी गर्भकाल के प्रथम तिमाही में गर्भपात होता है, इसमें आंवल पर रक्त के हल्के धब्बे व गाढ़ा स्राव चिपक जाता है। जेर रूकने की समस्या भी गर्भपात के बाद देखी जाती है, बहुत सारे पशुओं में इसके संक्रमण से गर्भाशय में मवाद (पायोमेट्रा) की समस्या प्रमुखतया देखने को मिलती है। भूरण में कोई विशेष परिवर्तन नहीं दिखाई देता है। संक्रमित मादा पशु में यह जीवाणु 20 सप्ताह के अन्दर स्वतः समाप्त हो जाते है, परन्तु नर पशु में जोकि 03 वर्ष की उम्र के बाद संक्रमित होते है, वो जीवन पर्यन्त वाहक बने रहते है।

निदान-इनकी पहचान भूरण के पेट के भाग तथा आवल से प्राप्त प्रदर्श द्वारा किया जाता है।

नियंत्रण-

1. इस रोग से बचाव हेतु टीकाकरण किया जाना उचित होता है।
2. कृत्रिम गर्भाधान द्वारा इस रोग के संक्रमण को रोका जा सकता है।
3. गर्भित पशु को सम्भावित संक्रमित पशु से अलग रखना चाहिए।

10. यूरियाप्लाजमीएसिसः- यह रोग यूरियाप्लाजमा डायवर्सम के द्वारा होता है, जो मादा पशु की योनि तथा नर पशु के प्रीप्यूस (शीश्न के अग्र भाग की चमड़ी) में सामान्यतया बिना किसी रोग किये रहता है, गर्भित पशु में स्पोरेडिक रूप से गर्भपात का कारण होता है, लेकिन कभी-कभी गम्भीर प्रकृति का गर्भपात भी कर सकता है। इसके

संक्रमण से मरे हुए अथवा कमजोर बछड़ों का जन्म होता है। अधिक से अधिक भ्रूण गर्भकाल के अन्तिम तिमाही में गर्भपातित होते हैं। इसमें मादा पशु तो बीमार नहीं पड़ती, परन्तु जेर रूकने की समस्या प्रायः देखने को मिलती है। भ्रूण के फेफड़े तथा श्वास नली में परिवर्तन दिखाई देते है तथा न्यूमोनिया के लक्षण भी प्रतीत होते है।

निदान-इनकी पहचान भ्रूण के फेफड़े व पेट के भाग तथा अंावल से प्राप्त प्रदर्श द्वारा किया जाता है।

नियंत्रण-

1. कृत्रिम गर्भाधान द्वारा इस रोग के संक्रमण को रोका जा सकता है।
2. गर्भित पशु को सम्भावित संक्रमित पशु से अलग रखना चाहिए।

11. कवक जनित गर्भपातः- विभिन्न प्रकार के कवक जनित गर्भपात जो कि आंवल को संक्रमित करते है और छोटे-छोटे अलग-अलग स्थानो पर (स्पोरेडिक) गर्भपात करते है। इनमें प्रमुखतया 60 से 80 प्रतिशत तक ऐस्परजीलस नामक कवक उत्तरदायी होता है। अन्य कवक म्यूकर, एब्सीडिया तथा राईजोपस आदि गर्भपात के कारण है। इनके द्वारा गर्भकाल के 04 माह से अन्त तक गर्भपात होने की सम्भावना रहती है तथा जाड़े के मौसम में प्रमुखतया प्रभावित करते है। ऐसा माना जाता है कि मुख अथवा श्वास नली के माध्यम से कवक शरीर में प्रवेश करते हैं तथा रक्त के माध्यम से प्लेसेन्टा में पहुंच जाते है और आवल को गम्भीर रूप से क्षतिग्रस्त करते है, इस तरह के गर्भपात में भ्रूण में पानी की कमी दिखाई देती है तथा 30 प्रतिशत तक के मामलो में भूरे रंग के गोल चकत्ते भ्रूण के सिर तथा कंधे के हिस्से की चमड़ी पर दिखाई देते हैं।

निदान- इनका कल्चर परीक्षण भ्रूण की प्रभावित चमड़ी के स्थान, पेट के भाग तथा आवल से प्राप्त प्रदर्श द्वारा किया जाता है।

नियंत्रण- इस रोग से बचाव हेतु गीले/भीगे हुये चारे को पशुओं को खिलाने से बचाना चाहिए।